अग्नि विद्या विमर्श

वेद विद्या सृष्टि विद्या का ही दुसरा नाम है। सृष्टि की रहस्यमयी प्रक्रिया की व्याख्या वेद में नाना विद्याओं के रूप में उपलब्ध होती है। अग्नि विद्या उनमें से एक महत्वपूर्ण विद्या है। समस्त सृष्टि को एक सत्ता नियंत्रित कर रही है उसकी शक्ति से ही समस्त प्राणी प्राणवन्त होते हैं। अग्नि उसी परमसत्ता की मूल शक्ति है जो सूर्य चन्द्र तारा व ग्रहादि के रूप में विकसित है। वैदिक ऋषियों ने इस सूक्ष्मतत्व को जान लिया था कि अनेक ब्रह्माण्डों का प्रजापति एक है और वही सबके भीतर रहकर जगत् का नियमन करता है जिसके कारण उसे अन्तर्यामी या सूत्रात्मा कहते हैं। अग्नि उसी सूत्रात्मा की शक्ति है जो नाना रूपों में बहुधा विकसित हो रहा है। अग्नि विद्या वैदिक तत्वज्ञान की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। समस्त कठोपनिषद में यम नचिकेता संवाद में अग्निविद्या का ही उपदेश किया गया है। प्रजापति ब्रह्म महाकाल व शक्तितत्व ये सभी अग्नि के ही रूप हैं। मनु ने जिसें तमोभूत अप्रज्ञात अलक्षण और प्रसुप्तावस्था कहा है उसी के धरातल पर अग्नि का जन्म होता है। ज्ञान और कर्म की जितनी शक्ति है उन सबका प्रतीक अग्नि है। जितने देव हैं, सब अग्नि के ही रूप हैं, यह ऐतेरेयब्राह्मण कहता है। अब प्रश्न उठता है कि अग्नि तत्व क्या है? क्या चुल्हें में जलनेवाला और काष्ठ से उत्पन्न होनेवाला अग्नि कोई देवता है? वेद में किस अग्नि का वर्णन है? इसका उत्तर है कि मूल और तूल दोंनों रूपों में जितनी शक्ति व उसके भेद हैं वे सब अग्नि के ही विभिन्न रूप है अतः कहा गया हैः- ''एक एवाग्निर्बहुधा समिद्धः।'' जो दहकती है उसे अग्नि कहते है। स्थूल काष्ठ या समिधा अग्नि के समिन्धन का एक

प्रतीक मात्र है। अर्थात् हम अग्नि को तब तक प्रत्यक्ष नहीं देख सकते है जब तक वह भूत के माध्यम से प्रत्यक्ष नहो। वृक्ष वनस्पति पशु पक्षी तथा मानव-इन तीनों में जो शक्ति तत्व है उसे प्राणाग्नि कहते हैं। मन- प्राण-वाक-इन तीनों के सम्मिलन से जो नई अग्नि या शक्ति उत्पन्न होती है, उसे ही वैश्वानर कहते है। मैत्रायणी उपनिषद् के अनुसारः-''अथयःपुरूषः सोह५ग्निर्वैश्वानरः। शरीर में प्राणात्मक स्पन्दन अन्नाद अग्नि का रूप है, जो केन्द्र के बाहर से सोमरूप अन्न को खींचकर पचाता है और शरीर की वृद्धि करता है, जिससे शरीररूपी यज्ञ संपन्न होता है यही अग्नि का जागरण है। अग्नि को हिरण्यगर्भ भी कहते है। क्योंकि इसी द्वारा गर्भ या शिशु का जन्म होता है। जीवन के रूप में उदबुद्ध होनेवाली यह अग्नि की अत्यन्त ही रहस्यमयी है, इसलिए इसे अदभुत भी कीा जाता है। जितनी भी भूतसृष्टि है, सबका मूल कारण हिरण्यगर्भ या अग्नि का पुत्र वह जाग्रत केन्द्र है, जिसे प्राणया जीवन कहा जाता है।

ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में अग्नि को यज्ञ का देवता, पुरोहित ऋत्विज होता और रत्नों का आधान करनेवाला कहा गया है। ऐतरेयब्राह्मण के अनुसार-''पृथिवी पुरोधाता है और अग्नि पुरोहित है। विश्व की मूलभूत शक्ति या अग्नि के प्रकट होने के लिए भौतिक शरीर चाहिए। अग्नि स्वयं पार्थिव धरातल पर प्रकट होकर भौतिक देह का निर्माण करता है। विश्व की विराट अग्नि को अश्वमेध और शरीर की अग्नि को ''अर्क'' कहा जाता है। अग्नि एक ज्योति है उसमें तीन ज्योतियाँ सम्मिलित रहती है। अग्नि-वायु-आदित्य वाक-प्राण-मन अथवा क्षर-अक्षर-अव्यय-ये ही तीन ज्योतियाँ हैं जिनके बिना कोई भी प्राणत्मक स्पन्दन संभव नही है। इन्हें ही प्राण-अपान व्यान-नामक तीन अग्नियाँ कहा जाता है जो यज्ञ की तीन वेदियों में गार्हपत्य दक्षिणाग्नि और आहवनीय के रूप में प्रज्वलित रहती हैं। ऋग्वेद में अग्नि को ऋत का प्रथमज कहा गया है। ऋत के धरातल पर ही अग्नि का जन्म होता है अतः वेदों में अग्नि को ''अपां गर्भः'' अर्थात् जल का पुत्र कहा गया है। ऋत के भीतर ही केन्द्र का

जन्म यज्ञ है। यज्ञ के लिए दो अरणियों के मंथन से अग्नि उत्पन्न होता है अतः इसे वेदों में ''सहसःसूनुः'' अर्थात् बलों का पुत्र कहा गया है।

अग्नि की सोम के लिये व्याकुलता या भुख को ही शतपथब्राह्मण में रूदन कहा गया है। जो अन्नाद या अन्न खानेवाला है, वह अन्न के लिए रूदन करता है। जो रूदन करता है वह रूद्र है। अग्नि ही रूद्र है। अन्नाद अग्नि अन्नरूप सोम के बिना रह नही सकता अतः अग्नि के दो रूप बताये गये हैः- एक घोर और दूसरा अघोर। अग्नि को जब सोम नहीं मिलता है तब वह उसका घोर या मृत्यु रूप हो जाता है। बिना सोम के अग्नि जिस केन्द्र में रहता है उसी को नष्ट कर देता है जैसे- बिना घी के दीपक की ज्वाला बत्ती को ही जला देता है। अन्न-अन्नाद का नियम एक यज्ञ है और द्यावापृथिवी के मध्य में जो सृष्टि है, वह सब इस नियम से व्याप्त है, इसी कारण इसे रूद्राग्नि का लोक या रोदसी कहते हैं।

एक अग्नि पृथिवी पर, दूसरी द्युलोक में सूर्य रूप में तथा दोनों के बीच में तीसरी अंतरिक्षस्थ अग्नि है, इसी को त्रेता या अग्नि की तीनों लोकों में स्थित सत्ता का द्योतक माना जाता हैः- ''विद्या ते अग्ने त्रेता त्रयाणि'' (यजुर्वेद-१२/१६)। मन-प्राण-वाक तीन अग्नियाँ है। प्राण-अपान-व्यान भी तीन अग्नियाँ हैं। अग्नि-वायु व सूर्य-ये भी तीन अग्नियाँ हैं। इन तीनों अग्नियों को ही ऋग्वेद में तीन भ्राता कहा गया है। पृथिवी की अग्नि पवमान, अंतरिक्ष की पावक और द्युलोक की शुचि कही जाता है। पवमान को निर्मन्थ अग्नि भी कहते है क्योंकि वह दो अरणियों को मथकर उत्पन्न की जाती है। माता और पिता शिशुरूप अग्नि को उत्पन्न करनेवाले दो मंथनदण्ड हैं, उन्हें प्राण और अपान भी कहते है जो व्यानरूपी शिला पर दो ओर से टकराते हैं और परस्पर के घर्षण से शारीरिक अग्नि को उत्पन्न करते हैं। शुचि-पावक-पवमान-इनतीन अग्नियों को ही क्रमशः ब्रह्माग्नि, देवाग्नि और भूताग्नि भी कहते हैं। आचार्य यास्क ने निरूक्त में कहा है कि जो कुछ हमारे सामने है वह सब अग्नि का ही कर्म है यथाः--

''यत्किचिंद् दार्ष्टि विषयकम् अग्निकर्मै व तत्।।''

अर्थात जितने भी पार्थिव पदार्थ हैं, सब में अग्नि व्याप्त है यही मौलिक तत्व रूप अग्नि है, उष्णता या दाह इसी की एक अवस्था है। इस विज्ञान को यजुर्वेद (१२/३७) में बताया गया है कि-हे अग्नि। तुम औषधियों के गर्भ में हो वनस्पतियों के गर्भ में हो, सब भूतों के गर्भ में हो और जल के भी गर्भ में हो। ऋग्वेद (१/७०/२) में कहा गया है कि वृक्षों लताओं व वनस्पतियों का फैलना बढ़नाभी अग्नि के कारण ही होता है। सायण के अनुसार-: माता पृथ्वी बहुत सी लताओं में इच्छा करती हुई अग्नि बच्चें की तरह सरकती है और वह पके हुए अन्न की तरह आस्वादन करनेवाले वृक्ष को पृथ्वी के भीतर के भाग में प्राप्त होता है। यह विज्ञान स्पष्ट करते हुए ऐतरेयब्राह्मण (२/५/६) में अग्नि को अन्नादि सब पदार्थो को उत्पन्न करनेवाला बताया गया है:-

''अग्निर्वैशर्माण्यत्रादीनि प्रयच्छति।।''

समस्त जीवधारियों के शरीर की रचना भी गर्भाशय की ''हिरण्यगर्भ अग्नि'' की ही महीमा है। अग्नि ताप देनेवाली यौगिक''वैश्वानर अग्नि'' को उत्पन्नकरता है और उसवैश्वानर से सब प्रकार का यज्ञ होता है। ऐतरेयब्राह्मण कहता है:- ''यदाग्नि:प्रवानिव दहति तदस्यवायव्य रूपम्।'' जब अग्नि गमनशील: होकर दाह करने लगती है वह वायुदेवता के सम्बन्ध का रूप है।

विभिन्न ऋतुयें भी अग्नि के कारण ही बदलती है। ऋतु अग्नि या संवत्सराग्नि के द्वारा जिस:जिस समय में जो जो पदार्थ प्रधानता से भूमण्डल की वस्तुओं से उत्पन्न होते हैं उनके सम्बन्ध से चैत्रादि बारह मासों के वैदिक नाम क्रमश:इस प्रकार हुए:- १. मधु २. माधव ३. शुक्र ४. शुचि ५. नभ ६.नभस्य ७.इष ८.उर्ज ९.सह १०.सहस्य ११. तप और १२. तपस्य।

इस प्रकार सब पदार्थो को धारणकरनेवाले सबमें शक्ति प्रदान करनेवाले प्राण रूप अग्नि का ही नाम '' ऋताग्नि या संवत्सराग्नि'' है। मकरसंक्रान्ति से कर्क संक्रान्ति तक

इस अग्नि का उन्नतिकाल और कर्क से मकर तक ऱ्हासकाल। जब सौर अग्नि का उन्नत्तिकाल होता हे तब पार्थिव अग्नि का ऱ्हासकाल होता है और जब सौर अग्नि का ऱ्हासकाल होता है तब पार्थिव अग्नि का उन्नत्तिकाल होंता है। सौर अग्नि को उन्नति काल में ऋत ओर ऱ्हासकाल में ''सत्य'' कहते है। सौरमंडल से आगत अग्नि प्रकीर्णभाव में रहती है और केंन्द्र नहीं बनाती अतःवह ऋत है और पार्थिव अग्नि पृथ्वी के केन्द्र में है इसलिए वह सत्य है। अग्नि की उन्नति के काल को दिन और हास के समय को रात्रि कहते हैं। वैदिक भाषा में दिन को ''शब्द'' और रात्रि को ''सगरा'' कहते हैं।

इस प्रकार अग्नि ही इस समस्त संसार को सूर्य चन्द्रमा सोम व वायु इत्यादि विभिन्न रूपों या नामों से संचालित कर रहा है। अग्नि ही समस्त रत्नादि पदार्थो के भी दाता हैं। अतःसंक्षेपतः अग्नि विद्या ही सभी श्रेष्ठ विद्याओं का मूलाधार है और एक अग्नि ही अपनी महिमा से इस सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित कर रहे हैं। अतः संक्षेपतः हम कह सकते है किः-'' एक एवाग्निर्बहुधा समिध्यतेति दिक''।।

डॉ. धीरेन्द्र झा
संस्कृत विभाग प्रमुख
भारती शिक्षा समिति
प्रेमकुंज, विंध्यवासिनी पथ
कदम कुआँ, पटना- ८००००३
(बिहार)